व्रजमण्डल के तीर्थ

वीरेन्द्र सिंह
शोध–छात्र, संस्कृत–विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला

भारत तीर्थों की भूमि है। सम्पूर्ण भारत वर्ष में अनेक तीर्थ हैं जिन स्थलों पर जाकर मनुष्य अपने आपको ईश्वर के समीप अनुभव करता है। इसमें व्रजमण्डल और इसके तीर्थ अपने आप में विशेष महत्त्व रखते हैं। व्रजमण्डल का सम्बन्ध भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं से है। व्रजमण्डल के तीर्थ प्रसिद्ध हैं।[1]

श्रीकृष्ण का जन्म मथुरा में हुआ था। व्रजमण्डल में उन्होंने बाललीलाएं की थी। गोवर्धन पर्वत पर उन्होंने गोचारण किया था। इस प्रकार और भी अनेक क्षेत्र इस स्थल में हैं जिससे श्रीकष्ण की बाललीलाओं का परिचय प्राप्त होता है। यह व्रजमण्डल चौरासी कोस में विस्तृत है जिसमें राजस्थान और उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्र सम्मिलित है।[2] सूरदास जैसे सन्त इस क्षेत्र में रहे और बल्लभाचार्य ने इस स्थल की यात्रा की थी।[3] इसे मथुरामण्डल भी कहा जाता है।[4] इस मथरा मण्डल में गोवर्धन, यमुना, व्रज, वृन्दावन इत्यादि पवित्र स्थल हैं। यह बर्हिषद् से पूर्वोतर ईशान कोण में, मथुरा से दक्षिण में, शोणपुर से पश्चिम में फैला है। इस मथुरा मण्डल को सहस्र पत्र वाले कमल के समान कहा गया है।[5] यह वृन्दावन, व्रज भूमि, गोवर्धन पर्वत ओर यमुना नदी गोलोक धाम से पृथ्वी पर श्रीकृष्ण द्वारा भेजे गए हैं। श्रीकृष्ण ने जब पृथ्वी पर अवतार लेने का निश्चय किया तो राधा उनके भावी वियोग से दुःखी हो गई। यह देखकर श्रीकृष्ण ने राधा सहित भूमि पर अवतार लेने का निश्चय किया और राधा के आग्रह पर चौरासो कोस व्रज भूमि, गोवर्धन पर्वत और यमुना नदी को भूमि पर भेजा।[6]

मथुरा मण्डल सभी तीर्थों में प्रमुख है। इस मथुरा मण्डल को तीर्थराज प्रयाग ने भी सम्मान दिया है।[7] एक बार सभी तीर्थ प्रयागराज का सम्मान कर अपने स्थान को चले गए। परन्तु वृन्दावनादि तीर्थ वहाँ उपस्थित नहीं हुए। नारद जी के मुख से यह वृतान्त सुनकर प्रयागराज क्रोधित हो गये और भगवान् से इस वृतान्त को कहा। भगवान् ने कहा मथुरामण्डल उनका घर है। क्या वह उस पर भी अपना अधिकार समझता है? यह सुनकर प्रयागराज लज्जित होकर मथुरामण्डल का पूजन कर अपने घर को चले गये। इस मथुरा मण्डल के तीर्थों में द्वादश वनों का पुराणों में उल्लेख किया गया है। पद्म पुराण में भद्र, श्री, लोह, भाण्डीर, खदीरक, बकुल, कुमुद, काम्य, मधु और वृन्दावन नामक वनों का उल्लेख है।[8]

वराह पुराण में भी मधुवन, तालवन, कुमुदवन, काम्यवन, बाहुलवन, भद्रवन, खदिरवन, महावन, लोहजङ्घवन, बिल्ववन, भाण्डीरवन और वृन्दावन इन द्वादश वनों का उल्लेख है। ये सात वन कालिन्दी के पश्चिम में और पांच वन पूर्व में हैं।[9] श्रीकृष्ण ने राक्षसों का वध कर इन बारह वनों में विहार किया था।[10]

पहला वन मधुवन[11] है जिसके दर्शन मात्र से मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है। अन्य वन तालवन[12] है जो मथुरा के पश्चिम में है। यहाँ पर स्थित कुण्ड में स्नान करने से मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति होती है।[13] इस वन में बलदेव ने धेनुकासुर का वध किया था।[14] तृतीय वन कुन्दवन को कहा गया है। इस वन के दर्शन करने से मनुष्य धन्य हो जाता है।[15] काम्यक वन को चतुर्थ वन कहा गया है। यह वन सभी वनों में श्रेष्ठ है। वहाँ जाने से मनुष्य हरि के लोक को प्राप्त होता है।[16] बकुल नामक पञ्चम वन में जाने से अग्नि लोक की प्राप्ति होती है।[17] षष्ठ वन भद्रवन है जो यमुना नदी के दूसरी ओर स्थित है।[18]

सप्तम वन खादिर वन है जहाँ जाने से मनुष्य विष्णु लोक को प्राप्त होता है।[19] अष्टम वन महावन है जहाँ जाने से मनुष्य को इन्द्र लोक प्राप्त होता है।[20] इस वन को अति गुह्य और उत्तम वन कहा गया है। इस स्थल पर पूतना का वध और यमलार्जुन वृक्षों को मोक्ष प्राप्त हुआ था।[21] लोहजङ्घ नामक नवम वन को सभी प्रकार के पापों का नाश करने वाला कहा गया है।[22] इस वन में शङ्खचूड नामक राक्षस ने रासलीला से चन्द्रानना नामक गोपी के हरण का प्रयास किया था जिसका वध श्रीकृष्ण ने किया था।[23] बिल्ववन नामक दशम वन है जो देवताओं द्वारा पूजित है। वहाँ जाने से मनुष्य ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है।[24]

भाण्डीर वन एकादश वन है जो योगियों का प्रिय और उत्तम स्थान है। उस वन के दर्शन मात्र से मनुष्य पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता।[25] इस वन में राधा और श्रीकृष्ण का विवाह ब्रह्माजी ने करवाया था।[26] वृन्दावन द्वादश वनों में मुख्य वन है और यह हरि का प्रिय है।[27] इस वन में ब्रह्म का ऐश्वर्य नित्य निवास करता है।[28] पद्मपुराण के अनुसार यह वन कभी नष्ट नहीं होता और यह ब्रह्माण्ड के शिखर पर स्थित है।[29] व्रज में होने वाले उपद्रवों को देखकर सभी व्रजवासियों ने व्रज को त्यागकर वृन्दावन को निवास स्थान बनाया था।[30] वृन्दावन में रात्रि में सभी व्रजवासियों के शयन करने पर विश्वकर्मा ने पांच योजन विस्तीर्ण नगर का वहाँ निर्माण किया था।[31]

वृन्दा द्वारा तप करने के कारण इस वन का नाम वृन्दावन प्रसिद्ध हुआ।[32] यह वृन्दा केदार नामक राजा की पुत्री थी। दुर्वासा ऋषि ने उसे हरिमन्त्र का उपदेश दिया था[33] और उसने इस निर्जन स्थान में तप किया था। कुशध्वज नामक राजा की तुलसी और वेदवती कन्याएं थी। तुलसी ने भी इस स्थान पर

तप किया था।[34] राधा के नामों के वृन्दा भी एक नाम कहा गया है। राधा का क्रीडा स्थल होने के कारण इसे वृन्दावन कहा गया है।[35] राधा की प्रसन्नता के लिए ही श्रीकृष्ण ने गोलोक धाम में इस वन का निर्माण किया है।[36]

इस व्रजमण्डल में गोवर्धन पर्वत भी एक प्रसिद्ध तीर्थ है। यह स्थल मथुरा के पश्चिम में स्थित है और मथुरा से दो योजन की दूरी पर स्थित है।[37] गर्ग–संहिता के अनुसार जब श्रीकृष्ण ने साकार रूप होने की कामना की उस समय उनकी गोद से गोलोक धाम, और अङ्गों से गङ्गा, कालिन्दी रासमण्डल इत्यादि और राधाजी की रोमावलियों से गोपियाँ प्रकट हुईं।[38] राधिका ने रासमण्डल के लिए श्रीकृष्ण से उत्तम स्थल रचने की प्रार्थना की। श्रीकृष्ण उस समय अपने हृदय में देखने लगे। उनके हृदय से तेज उत्पन्न हुआ और पर्वत रूप होकर वृद्धि को प्राप्त होने लगा।[39] उस समय गोलोक धाम में हाहाकार हुआ। यह देखकर श्रीकृष्ण ने उस पर्वत का ताडन किया और उसे बढ़ने से रोका। इस पर्वत ने शाल्मली द्वीप में द्रोणाचल की स्त्री से जन्म लिया और गिरिराज के नाम से प्रसिद्ध हुआ।[40]

पुलत्स्य ऋषि ने उसके मनोहारी रूप को देखकर द्रोणाचल से उसे मांगा।[41] शाप के भय से द्रोणाचल ने गोवर्धन को मुनि के साथ जाने की आज्ञा दे दी। गोवर्धन ने यह प्रतिज्ञा की कि शाल्मलो द्वीप और कोशल के मध्य उसे भूमि पर रखने पर वह नहीं उठेगा।[42] मुनि ने उसकी यह प्रतिज्ञा स्वीकार की। मार्ग में व्रजमण्डल को देखकर गोवर्धन ने वहाँ रहने का विचार किया और अपना भार बढ़ा लिया। यह देखकर मुनि ने उसे भूमि पर रख दिया। मुनि ने उसे पुनः उठाने का पयास किया तो उस पर्वत ने मुनि को अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण कराया।[43] मुनि ने यह देखकर गोवर्धन को नित्य तिल के दाने के समान क्षीण होने का शाप दिया।[44] उस समय में यह गोवर्धन तिल के दाने के समान नित्य क्षीण हो रहा है ऐसी मान्यता है। इस पर्वत की परिक्रमा करने से यज्ञ का फल प्राप्त होता है।[45] भगवान् श्रीकृष्ण ने व्रज में इन्द्र के यज्ञ का निषेध कर गिरियज्ञ प्रारम्भ किया था।[46] इन्द्र ने यह देखकर व्रजमण्डल को प्रलयकालीन वृष्टि द्वारा नष्ट करने का प्रयास किया किन्तु श्रीकृष्ण ने इस पर्वत को हाथ पर धारण कर व्रजमण्डल की रक्षा की थी।[47] गोवर्धन के समीप जहाँ पर कृष्ण ने इन्द्र के यज्ञ को नष्ट किया था और गिरिराज को धारण किया था वह अन्नकूट के नाम से प्रसिद्ध है।[48] गोवर्धन पर स्थित मानसी गङ्गा में स्नान, गोवर्धन दर्शन और अन्नकूट परिक्रमा से अधिक और कुछ भी पुण्यदायक नहीं है।[49]

इस माथुर मण्डल क मध्य में मथुरा नामक पुरी है जिसके दर्शन से मनुष्य भक्ति को प्राप्त करता है।[50] मथुरा की सप्तमोक्षदायिनी पुरियों में गणना की गई

है।[51] यह पुरी गोवर्धन और यमुना नदी के मध्य में स्थित है।[52] इस पुरी में शत्रुघ्न ने लवणासुर का वध किया था। इस मथुरा के स्वामी साक्षात् केशव है। वाराह मथुरा के श्रेष्ठ मन्त्री हैं। मथुरा के क्षेत्रपाल साक्षात् महादेव और दुर्गा मथुरा की सदैव रक्षा करती है।[53]

मथुरा में स्थापित वाराह भगवान् की प्रतिमा की स्थापना लवणासुर के वध के पश्चात् शत्रुघ्न ने की थी। प्राचीन काल में मान्धाता नामक राजा की भक्ति से प्रसन्न होकर वाराह भगवान् ने यह प्रतिमा उसे दी थी।[54]

इस प्रतिमा का कपिल नामक ब्राह्मण नित्य पूजन करता था।[55] कपिल ने यह प्रतिमा इन्द्र को दी थी।[56] रावण ने जब इन्द्र को युद्ध में परास्त किया तो इन्द्र के भवन में वाराह की मूर्ति को देखकर वह सम्मोहित हो गया।[57] वह पुष्पक विमान में उस प्रतिमा को ले जाने में समर्थ नहीं हुआ। रावण वाराह भगवान् की स्तुति करने लगा। विष्णु विरोधी रावण से जब भगवान् ने स्तुति का कारण पूछा तो उसने वाराह प्रतिमा में अपनी उत्कट भक्ति को इसका कारण बताया।[58] इसके पश्चात् वह वाराह प्रतिमा भारहीन हो गई और रावण उसे लङ्कापुरी ले गया।[59] भगवान् श्रीराम ने रावण वध के पश्चात् इस प्रतिमा को अयोध्या लाकर उसका पूजन किया।[60] लवणासुर के वध से प्रसन्न होकर श्रीराम ने इस प्रतिमा को वर के रूप में शत्रुघ्न को दिया।[61] इस प्रकार यह प्रतिमा मथुरा मे प्रतिष्ठित हुई।[62]

मथुरा में साक्षात् हरि भगवान् वाराह, नारायण, वामन और हलधारी के रूप में प्रतिष्ठित है।[63] इस मथुरा में श्रीकृष्ण ने लीलाएं की थीं। मथुरा नगरी को श्रेष्ठ नगरी कहा गया है क्योंकि मथुरा का नाम मात्र लेने से पाप दूर हो जाता है और मुक्ति की प्राप्त होती है। अतः यह मथुरा नगरी श्रेष्ठ है।[64]

अन्ततः यह स्पष्ट है कि व्रजमण्डल के तीर्थों, वनों के दर्शन, मात्र से मानव जीवन का साफल्य निश्चित होता है और मानव मुक्ति का अधिकारी हो जाता है। कदाचित मुक्ति प्राप्त भी करता होगा, ऐसा इस वर्णन से स्पष्ट होता है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1 तीर्थ सेवन क्यों और कैसे, अ0 1, पृ0 30, (पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य, अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा–181003)

2 वही, अ0 1, पृ0 30

3 व्रज के धर्म सम्प्रदायों का इतिहास–भाग–2, प्रभुदयाल मीतल नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली–6, प्रथम संस्करण, 1968, अध्याय–6, पृ0 218

4 प्रागुदीच्यां बर्हिषदोदक्षिणस्यां यदोः पुरात्
पश्चिमायां शोणपुरान्माथुरं मण्डलं विदुः।। गर्गसंहिता, वृन्दावन खण्ड, 1.11

5 सहस्रपत्रकमलाकारं माथुरं मण्डलं

विष्णुचक्र परिभ्रामत् धाम वैष्णवमदभुतम्।। पद्म पुराण, पाताल खण्ड, 69.14

6 वेदनागक्रोशभूमिंस्वधाम्नः श्रीहरिःस्वयम्
गोवर्धनं च यमुनां प्रेषयामास भूपरि।। गर्ग संहिता, गोलोक खण्ड, 3.33

7 मथुरायांशौरिगृहे गर्गाचार्यमुखात् श्रुतम्
माथुरं मण्डलं दिव्यं तीर्थराजेन पूजितम्।। गर्ग संहिता, वृन्दावन खण्ड, 1.13

8 भद्रश्रीलोहभाण्डीरमहातालखदीरका
बकुलंकुमुदं काम्यं मधु वृन्दावन तथा।। पद्म पुराण, पाताल खण्ड, 69.16

9 द्वादशैतावती सङ्ख्या कालिन्द्याः सप्त पश्चिमे
पूर्वे पञ्चवनं प्रोक्तं तत्रास्ति गुह्यमुत्तमम्।। पद्म पुराण, पातालखण्ड, 69.17

10 हत्वा च कंस प्रहितान्पूतनादीन्निशाचरान्
विजहार स गोपीभिर्वनेषु द्वादशस्वपि।। नारदीय पुराण, उत्तर खण्ड, 79.4

11 रम्यं मधुवनं नाम विष्णु स्थानमुत्तमम्
तं दृष्ट्वा मनुजो देवि कृतकृत्यो जायते।। वराह पुराण, 153.33

12 अस्तितालवनं नाम धेनुकासुर रक्षितं
मथुरायां पश्चिमो भागे अदूरादर्द्धयोजनम्।। वराह पुराण, 158.39

13 तत्र कुण्डं स्वच्छजलं नीलोत्पल विभूषितम्।
तत्र स्नानेन दानेन वाञ्छितं फलमाप्नुयात्।। वही, 158.40

14 क. गोपालै सहितः सर्वैःययौ तालवनम्।।
ख. तेनमुष्टिप्रहारेण सद्यो वै निधनं गतः।। गर्ग संहिता, वृन्दावन खण्ड, 8, 1, 26

15 वनं क
तत्र गत्वा नरो देवि कृतकृत्यो जायते।। वराह पुराण, 153.35

16 चतुर्थं काम्यकवनं वनानां वनमुत्तमम्
तत्र गत्वा नरो देवि ममलोके महीयते।। वराह पुराण, 135.36

17 पञ्चमं बकुलं नाम वनानामुत्तमम्
तत्र गत्वा नरो देवि अग्नि स्थानं स गच्छति।। वराह पुराण, 135.37

18 यमुनायां परे पारे देवानामपि दुर्लभम्
अस्ति भद्रवनं नाम षष्ठं वनमुत्तमम्।। वराह पुराण, 135.39

19 सप्तमं तु वनं भूमे खादिरं लोक विश्रुतम्
तत्र गत्वा नरो भद्रे मम लोकं स गच्छति।। वराह पुराण, 135.42

20 महावनं चाष्टमं तु सदैव तु ममप्रियम्
यत्र गत्वा तु मनुज इन्द्रलोके महीयते।। वराह पुराण, 135.43

21 महावनं तत्र गीतं तत्रास्ति गुह्यमुत्तमम्।।
पूतनादि वधस्तत्र यमलार्जुन भञ्जनम्।। पद्म पुराण, पाताल खण्ड, 69.52,53

22 लोहजङ्घ वनं नाम लोहजङ्घेन रक्षितम्
नवमं तु वनं नाम सर्वपातक नाशनम्।। वराह पुराण, 135.44

23 अथ कृष्णो गोपिकाभिः लोहजङ्घ वनं ययौ।।
मुष्टिनातच्छिरश्छित्त्वातस्मात् चूडामणिं हरिः
जग्राह माधवः साक्षात् सुकृती शेवधिं यथा।। गर्ग संहिता, वृन्दावन खण्ड 20.1,44

24 वनं बिल्ववनं नाम दशमं देवपूजितम्
तत्र गत्वा तु मनुजो ब्रह्मलोके महीयते।। वराह पुराण, 135.45

25 एकादशं तु भाण्डीरं योगिनां प्रियमुत्तमम्

तस्य दर्शनमात्रेण नरो गर्भं न गच्छति।। वराह पुराण, 153.46

26 तयोर्विवाहो भविता भाण्डीरे यमुना तटे।।
वृन्दावन समीपे चनिर्जने सुन्दरे स्थले
परमेष्ठी समागत्य विवाहं कारयिष्यति।। गर्ग संहिता, गिरिराज खण्ड, 6.34,35

27 वृन्दावनं द्वादशमं वृन्दया परिरक्षितम्
मम चैव प्रियं भूमे सर्वपातक नाशनम्।। वराह पुराण, 153.48

28 यद् ब्रह्म परमैश्वर्यं नित्यं वृन्दावनाश्रयम्
कृष्णधाम परं तेषां वन मध्ये विशेषतः।। वराह पुराण, 152.121

29 सात्वतां स्थान मूर्धन्यं विष्णोरत्यन्तं दुर्लभम्
नित्यं वृन्दावनं नाम ब्रह्माण्डोपरि संस्थितम्।। पद्म पुराण, पाताल खण्ड, 69.8

30 कृत्वायुक्तिं च गोपेश तत्स्थानं त्यक्तुमुद्यतः
गन्तुं वृन्दावनं सर्वानुवाच तत्क्षणं मुने।। ब्रह्मवैवर्त पुराण, 16.149

31 नगरकर्तुमारेभे ध्यात्वा कृष्णं शुभेक्षणम्
पञ्चयोजन विस्तीर्णं भारते श्रेष्ठमुत्तमम्।। ब्रह्मवैवर्त पुराण, 17.14

32 वृन्दायत्र तपस्तेपे तत्तु वृन्दावनं स्मृतम्
वृन्दया अत्र कृता क्रीडा तेन वा मुनिपुङ्गवः।। ब्रह्मवैवर्त पुराण, 17 207

33 तस्या तपसः स्थानं तदिदं च तपोधनः
तेनवृन्दावनं नाम प्रवदन्ति मनीषिणः।। ब्रह्मवैवर्त पुराण, 17.215

34 दत्तो दुर्वासा तस्यै हरेर्मन्त्रः सुदुर्लभः।। ब्रह्मवैवर्त पुराण, 17.201

35 राधा षोडशनाम्ना च वृन्दावन श्रुतौ श्रुतम्
तस्याः क्रीडावनं रम्यं तेन वृन्दावनं स्मृतम्।। ब्रह्मवैवर्त पुराण, 17.217

36 गोलोके प्रीतये तस्याः कृष्णेन निर्मिता पुरा
क्रीडार्थं भुवि तन्नाम्ना वृन्दावनं स्मृतम्।। वही, 17.218

37 अस्तिगोवर्धनं नाम क्षेत्रं परम दुर्लभम्
मथुराया पश्चिम भागे अदूराद्योजन द्वयम्।। वराह पुराण, 164.1

38 गर्ग संहिता, गिरिराज खण्ड, 9, 3 से 24

39 तदैव कृष्णहृदयात् गोपीव्यूहस्य पश्यतः
निर्गतं सजलं तेजो अनुरागस्य इव अङ्कुरम्।। गर्ग संहिता, गिरिराज खण्ड, 9.33

40 भारतात्पश्चिम दिशि शाल्मलीद्वीपमध्यत
गोवर्धनो जन्म लेभे पत्न्यां द्रोणाचलस्य च।। गर्ग संहिता, गिरिराज खण्ड, 9.44

41 अर्थीतवान्तिके प्राप्तः काशिस्थोहं महामुनि
गोवर्धनं सुतं देहिनान्यैर्मेत्र प्रयोजनम्।। गर्ग संहिता, वृन्दावन खण्ड, 2.23

42 मुनेत्रयस्थले भूम्यां स्थापनां मे करिष्यसि
करिष्यामि न च उत्थानं तद्भूम्यां शपथोमम।। वही, 2.32

43 मुनेत्रमेनदोषोस्तित्वया मे स्थापना कृता
करिष्यामि न चोत्थानं पूर्वं मे शपथः कृतः।। वही, 2.46

44 काशीं गते पुलस्त्यषौत्वयं गोवर्धनो गिरिः
नित्यं संक्षीयतेनन्दतिलमात्रं दिने दिने।। वही, 2.49

45 गोवर्धनं परिक्रम्य दृष्ट्वा देवं परं हरिम्
राजसूयाश्वमेधानां फलं प्राप्नोत्यसंशयम्।। वराह पुराण, 164.15,16

46 तस्माद् गवां ब्राह्मणावांमद्रेश्चारभ्यातां मखः

याइन्द्रयाग सम्भारास्तैरयं साध्यतां मुखः।। भागवत पुराण, 10.24.25

47 इत्युक्त्वा हस्तेन कृत्वा गोवर्धनाचलम्
दधार लीलया कृष्णश्छत्रकामिव बालकः।। भावगत पुराण, 10.25.19

48 तासां गवां रक्षणाय धृतो गिरिवरस्तदा
सोऽन्नकूट इति ख्यातः सर्वतः शक्रपूजितः।। वराह पुराण, 164.26

49 स्नात्वा मानस गङ्गायां दृष्ट्वा गोवर्धने हरिम्।।
अन्नकूटं परिक्रम्य किं पुनः परिशोचति।।। वराह पुराण, 164.11,12

50 तन्मध्ये मथुरा नाम पुरी सर्वोत्तमोत्तमा।
यस्या दर्शनमात्रेण भक्तिं निन्दति मानव।। नारदीय पुराण उत्तराखण्ड, 79.21

51 अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारवती ज्ञेयाः सप्तैताः मोक्षदायिका।। गरूड़ पुराण, प्रेत खण्ड, 49.114

52 गोवर्धनो गिरिवरो यमुना च महानदी
तयोर्मध्ये पुरी रम्या मथुरा लोक विश्रुता।। वराह पुराण, 165.23

53 क. परिपूर्णतमः साक्षात् श्रीकृष्णो भगवान्हरिः
स्वयं हि मथुरानाथः केशव क्लेशनाशनः।। गर्ग संहिता, मथुरा खण्ड, 25.3
ख. साक्षात् कपिल वाराहः सोयं मन्त्रिवरः स्मृतः।। गर्ग संहिता, मथुराखण्ड, 25.8
ग. क्षत्ताश्रीमथुरायाश्चनाम्ना भूतेश्वरः शिवः।। गर्ग संहिता, मथुरा खण्ड, 25.9
घ. चण्डिकास्तु महाविद्यादेवी दुर्गार्तिनाशिनी
सिंहासनरूढा सदा रक्षां मथुरायाः करोति हि।। वही, मथुरा खण्ड, 25.10

54 कृतेयुगे हि राजासीन्मान्धाता नाम नामतः।।
तस्यतुष्टेन हि मया प्रतिमेयं समर्पिता।। वराह पुराण, 163.22,23

55 मनसा निर्मिता तेन वाराही प्रतिमा शुभा
कपिलो ध्यायते नित्यमर्चति स्म दिने दिने।। वाराह पुराण, 163.26

56 कपिलः प्रददौ यं वै प्रसन्नः शतमन्यवे।। गर्ग संहिता, मथुरा खण्ड, 25.4

57 दृष्ट्वा कपिल वाराहं शिरसा धरणीं गत।।
तेन सम्मोहितो देवि रावणो नाम राक्षसः।। वराह पुराण, 163.32,33

58 क. देवदेवनमस्तुभ्यं भक्तानामभयप्रद
ख. मम त्वं भक्ति नम्रस्य प्रसादं कुरु सर्वदा।। वराह पुराण, 163.36,37

59 ततः समर्पयामास कपिलं दिव्यरूपिणम्
पुष्पके तु समारोप्य नीतवान्नगरीं प्रति।। वराह पुराण, 163.50

60 जित्वालङ्कां राधवेन्द्रस्तमानीयप्रयत्नतः
अयोध्यायां च वाराहमर्चयामास मैथिल।। गर्ग संहिता, मथुरा खण्ड, 25.6

61 नय शत्रुघ्न देवं त्वं दिव्यं वाराहरूपिणम्
धन्याऽसौ मण्डली लोके धन्या सा मथुरापुरी।। वराह पुराण, 163.60

62 तत्रमध्ये तु संस्थाप्य पूजयामासराघव
अनेन क्रमयोगेन मथुरायां स्थितः प्रभु।। वही, 163.65

63 एकावाराह मूर्तिश्च परानायणहवया
वामनाख्या तृतीया च त चतुर्षीहलधारिणी।। नारदीयपुराण, उत्तरखण्ड,80.49

64 यन्नाम पापं विन्निहन्ति तत्क्षणं भवत्यलं यां गृणतोपिमुक्तयः
वीथी वीथीषु च मुक्तिरस्यास्तस्मादिमां श्रेष्ठतमांविदुर्बुधाः।।गर्ग संहिता, मथुरा खण्ड,25.32